

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 76 — शाल्व का द्वारका पर आक्रमण

5 October 2026



पुराने अपमान की आग में जलता शाल्व भगवान् शिव से लोहे का उड़ता नगर पाकर उसे द्वारका पर उतार देता है — और उसी आतंक के बीच एक घायल राजकुमार अपने ही सारथि से सीखता है कि रणभूमि का धर्म वास्तव में क्या माँगता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस छिहत्तरवें अध्याय में शुकदेवजी शाल्व की कथा आरम्भ करते हैं, जिसने पृथ्वी को यादवों से रहित करने की प्रतिज्ञा की और शिवजी से सौभ नामक आकाशचारी नगर प्राप्त किया। जब कृष्ण इन्द्रप्रस्थ में हैं, शाल्व द्वारका को घेर लेता है, और युवा वीर प्रद्युम्न यदुवंशी योद्धाओं का नेतृत्व करते हुए उसका सामना करते हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण

- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)
- अध्याय: 76 (षट्सप्ततितम अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: शाल्व और वृष्णियों का युद्ध
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए); कथा के भीतर प्रद्युम्न और उनके सारथि, दारुक-पुत्र
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: द्वारका नगरी और उसके परकोटे के सामने की रणभूमि
- केंद्रीय विषय: शाल्व की प्रतिज्ञा और शिव-आराधना; आकाशचारी नगर सौभ; द्वारका का घेरा; प्रद्युम्न का पराक्रम और रणभूमि से उनका हटाया जाना; सारथि द्वारा योद्धा-धर्म की व्याख्या
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 76, श्लोक 1-33
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, द्वितीय भाग)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

पचहत्तरवें अध्याय में इन्द्रप्रस्थ में युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ सम्पन्न हुआ। पाण्डवों के वैभव से ईर्ष्या में जलते दुर्योधन ने मय दानव की बनाई सभा में जल को स्थल और स्थल को जल समझकर ठोकर खाई; भीम और रानियाँ हँस पड़ीं, और वह मौन क्रोध में हस्तिनापुर लौट गया। पृथ्वी का भार उतारने के संकल्प से कृष्ण ने यह सब होने दिया।

शुकदेवजी एक नया आश्चर्य सुनाते हैं

दुर्योधन के अपमान की कथा कहकर शुकदेवजी परीक्षित को कृष्ण का एक और अद्भुत कर्म सुनने का निमन्त्रण देते हैं — उन प्रभु का, जिन्होंने अपनी लीला के लिए मनुष्य-शरीर धारण किया था; वह कर्म जिसके द्वारा आकाशचारी नगर सौभ के स्वामी का अन्त हुआ। परिणाम पहले ही बता दिया जाता है, ताकि श्रोता युद्ध का हर मोड़ यह जानते हुए सुने कि सब किसके हाथों में है।

श्रीशुक उवाच

अथान्यदपि कृष्णस्य शृणु कर्माद्भुतं नृप ।

क्रीडानरशरीरस्य यथा सौभपतिर्हतः ॥ १ ॥

śrī-śuka uvāca athānyad api kṛṣṇasya śṛṇu karmādbhutaṁ nṛpa kṛīḍā-nara-śarīrasya yathā saubha-patir hataḥ

अर्थ: श्रीशुकदेवजी बोले — हे राजन्, अब लीला के लिए मनुष्य-देह धारण करने वाले श्रीकृष्ण का एक और अद्भुत कर्म सुनो — किस प्रकार सौभपति मारा गया। (स्कन्ध 10, अध्याय 76, श्लोक 1)

शुकदेवजी स्मरण कराते हैं कि यह शाल्व शिशुपाल का मित्र था। जब शिशुपाल रुक्मिणी से विवाह की आशा में आया था, तब शाल्व बारात के साथ आया था, और उस दिन वह, जरासन्ध और अन्य राजा यदुवंशियों के हाथों युद्ध में बुरी तरह पराजित हुए थे।

शाल्व को प्रतिज्ञा और शिव-आराधना

उस पराजय से आहत शाल्व ने सब उपस्थित राजाओं के सुनते हुए प्रतिज्ञा की कि वह पृथ्वी को यादवों से खाली कर देगा और वे स्वयं उसका पुरुषार्थ देखेंगे।

शाल्वः प्रतिज्ञामकरोच्छृण्वतां सर्वभूभुजाम् ।

अयादवां क्षमां करिष्ये पौरुषं मम पश्यत ॥ ३ ॥

śālvaḥ pratijñām akaroc chṛṇvatāṁ sarva-bhūbhujām ayādavāṁ kṣmāṁ kariṣye pauruṣaṁ mama paśyata

अर्थ: पृथ्वी के समस्त राजाओं के सुनते-सुनते शाल्व ने शपथ ली — “मैं इस धरती को यादवरहित कर दूँगा, मेरा पराक्रम देखना!” (स्कन्ध 10, अध्याय 76, श्लोक 3)

ऐसी मूर्खतापूर्ण प्रतिज्ञा करके उस राजा ने देवाधिदेव पशुपति की आराधना आरम्भ की, और दिन में केवल एक बार एक मुट्ठी धूल को ही अपना आहार बनाया। एक वर्ष के अन्त में शीघ्र प्रसन्न होने वाले सर्वशक्तिमान् उमापति अपने शरणागत के सामने प्रकट हुए और वर देने को कहा। शाल्व ने एक ऐसा यान माँगा जो उसकी इच्छा से कहीं भी जा सके; जिसे देवता, असुर, मनुष्य, गन्धर्व, नाग और राक्षस कोई न तोड़ सके; और जो वृष्णियों के लिए भय का कारण बने।

मय दानव सौभ का निर्माण करता है

“ऐसा ही हो,” शिवजी ने कहा, और उनकी आज्ञा से शत्रु-नगरों को जीतने वाले मय दानव ने शाल्व के लिए लोहे का एक नगर बनाया, जिसका नाम सौभ पड़ा। वह कोई साधारण रथ नहीं था — वह उड़ने वाला पूरा नगर था।

तथेति गिरिशादिष्टो मयः परपुरंजयः ।

पुरं निर्माय शाल्वाय प्रादात्सौभमयस्मयम् ॥ ७ ॥

tatheti giriśādiṣṭo mayāḥ para-puraṁ-jayaḥ puraṁ nirmāya śālvāya prādāt saubham ayas-mayam

अर्थ: “तथास्तु” कहकर गिरीश से आदेश पाए हुए शत्रुपुरविजयी मय ने लौहमय नगर रचकर शाल्व को समर्पित किया — यही सौभ था। (स्कन्ध 10, अध्याय 76, श्लोक 7)



एक मुड़ी धूल पर पूरा वर्ष बिताकर शाल्व शिव की आराधना करता है; शीघ्र प्रसन्न होने वाले उमापति उसकी इच्छा पूरी करते हैं, और उनकी आज्ञा से मय लोहे का नगर सौभ बनाता है।

भीतर से अन्धकारमय और दूसरों के लिए अगम्य वह सौभ अपने स्वामी की इच्छा से कहीं भी चला जाता था। यह यान हाथ में पाकर, और वृष्णियों से पुराना वैर स्मृति में जलाए हुए, शाल्व द्वारका की ओर चल पड़ा।

द्वारका का घेरा

शाल्व ने विशाल सेना से नगर को घेर लिया और उसे चारों ओर से उजाड़ने लगा — उसके उपवन और क्रीड़ा-उद्यान, ऊँचे गोपुरों वाले द्वार, ऊपरी मंज़िलों वाले प्रासाद, अट्टालिकाएँ और परकोटे, विश्राम और विहार के स्थान। उस महान् उड़ते नगर से शस्त्रों की धाराएँ बरसने लगीं — शिलाएँ, उखड़े वृक्ष, वज्र, सर्प और ओले — और ऐसा प्रचण्ड बवण्डर उठा कि सारी दिशाएँ धूल से ढक गईं। सौभ से इस प्रकार पीड़ित कृष्ण की नगरी को क्षण भर भी चैन न मिला, जैसे प्राचीन काल में त्रिपुर दैत्य के अत्याचार से पृथ्वी को न मिला था।

प्रद्युम्न रण में उतरते हैं

अपनी प्रजा को इस प्रकार सताए जाते देख महायशस्वी प्रद्युम्न, स्वयं ऐश्वर्यशाली वीर, रथ पर चढ़े और प्रजा को पुकारकर बोले — “डरो मत!”

प्रद्युम्नो भगवान् वीक्ष्य बाध्यमाना निजाः प्रजाः ।

मा भैष्टेत्यभ्यधाद् वीरो रथारूढो महायशाः ॥ १३ ॥

pradyumno bhagavān vīkṣya bādhyamānā nijāḥ prajāḥ mā bhaiṣṭety abhyadhād vīro rathārūḍho mahā-yaśāḥ

अर्थ: अपने नगरवासियों पर आक्रमण होते देखकर परम कीर्तिमान्, तेजस्वी एवं शूरवीर प्रद्युम्न रथारूढ़ होकर उनसे बोले — “भय मत करो।” (स्कन्ध 10, अध्याय 76, श्लोक 13)



अपनी प्रजा को सताए जाते देख प्रद्युम्न रथ पर चढ़कर पुकारते हैं 'डरो मत'; सात्यकि, साम्ब, अक्रूर, कृतवर्मा और अन्य यदु वीर उनके पीछे रण में निकलते हैं।

उनके पीछे सात्यकि, चारुदेष्ण, साम्ब, अपने छोटे भाइयों सहित अक्रूर, हृदीक-पुत्र कृतवर्मा, भानुविन्द, गद, शुक, सारण और अनेक दूसरे महाधनुर्धर रथ-सेनापति निकले — सब कवच पहने हुए, रथों, हाथियों, घोड़ों और पैदल सैनिकों से सुरक्षित। तब शाल्व के सैनिकों और यदुवंशियों के बीच वैसा ही तुमुल, रोमांचकारी युद्ध छिड़ गया जैसा प्राचीन काल में देवताओं और असुरों के बीच हुआ था।

राजकुमार के दिव्यास्त्र

रुक्मिणी-नन्दन ने अपने दिव्यास्त्रों से सौभपति की माया को क्षण भर में वैसे ही नष्ट कर दिया जैसे तप्त किरणों वाला सूर्य रात्रि का अन्धकार मिटा देता है। उन्होंने शाल्व के सेनापति को पच्चीस बाणों से बंध दिया — सोने के पंखों वाले, लोहे की नोक वाले, चिकनी गाँठों वाले बाण। स्वयं शाल्व पर उन्होंने सौ बाण छोड़े, फिर उसके प्रत्येक सैनिक को एक-एक, प्रत्येक नायक को दस-दस और प्रत्येक वाहन को तीन-तीन बाण मारे। महात्मा प्रद्युम्न का यह महान् और अद्भुत पराक्रम देखकर दोनों पक्षों के योद्धाओं ने — अपने भी और शत्रु के भी — उनका सम्मान किया।

वह नगर जो अनेक भी था और एक भी

किन्तु मय का बनाया और माया से बुना सौभ शत्रुओं के लिए समझ पाना कठिन था। कभी वह अनेक नगरों-सा दिखता, कभी एक; कभी दिखाई देता, कभी लुप्त हो जाता। एक क्षण वह धरती पर टिका होता, दूसरे क्षण आकाश में, कभी पर्वत-शिखर पर और कभी जल पर; वह घूमती हुई अलात-चक्र की भाँति चक्कर काटता और कहीं एक जगह न ठहरता। शाल्व जहाँ-जहाँ अपने नगर और सैनिकों सहित दिखाई देता, वहीं-वहीं यादव सेनापति अपने बाण छोड़ते। वे बाण स्पर्श में अग्नि और सूर्य के समान थे और विषधर सर्पों की तरह दुःसह; उनके प्रहार से शाल्व का नगर और सेना अत्यन्त पीड़ित हुए, और शाल्व स्वयं मूर्च्छित हो गया।



मय की माया से बुना सौभ कभी अनेक और कभी एक दिखता है, बारी-बारी धरती, आकाश, पर्वत-शिखर और जल पर टिकता है; शाल्व जहाँ दिखता है, वहीं यादव सेनापति बाण छोड़ते हैं।

वृष्णि वीर अपनी जगह डटे रहते हैं

शाल्व के सेनापतियों के शस्त्र-प्रवाह से वृष्णि वीर भी उतने ही पीड़ित हो रहे थे, फिर भी उनमें से किसी ने अपना मोर्चा नहीं छोड़ा। उन्होंने दोनों लोकों को जीतने का निश्चय कर रखा था — अपने स्थान पर प्राण देने वाले योद्धा का स्वर्गीय फल, या विजेता का पार्थिव यश।

शाल्वानीकपशस्त्रौघैर्वृष्णिवीरा भृशार्दिताः ।

न तत्यजू रणं स्वं स्वं लोकद्वयजिगीषवः ॥ २५ ॥

śālvānikapa-śastraughair vṛṣṇi-vīrā bhṛśārditāḥ na tatyajū raṇaṁ svaṁ svaṁ loka-dvaya-jigīṣavaḥ

अर्थ: शाल्व के सेनानायकों की शस्त्र-वर्षा से अत्यन्त व्यथित होने पर भी वृष्णि वीरों ने युद्ध में अपने-अपने स्थान नहीं त्यागे, क्योंकि वे इहलोक और परलोक दोनों में विजय चाहते थे। (स्कन्ध 10, अध्याय 76, श्लोक 25)

द्युमान् की गदा और सारथि का निर्णय

शाल्व के मन्त्रियों में द्युमान् नाम का एक महाबली योद्धा था, जिसे प्रद्युम्न पहले गहरी चोट पहुँचा चुके थे। अब वह प्रद्युम्न पर टूट पड़ा, फौलादी गदा से उन पर प्रहार किया और ज़ोर से गरजा। उस प्रहार से राजकुमार की छाती चूर हो गई। युद्ध-नियमों के ज्ञाता उनके सारथि दारुक-पुत्र उसी क्षण शत्रुदमन प्रद्युम्न को रणभूमि से बाहर ले गए।

प्रद्युम्न को लज्जा

मुहूर्त भर में प्रद्युम्न को होश आया, और सारथि से उनके पहले शब्द कटु थे — “अरे सारथि, मुझे युद्ध से हटाकर तुमने बहुत अनुचित किया। यदुकुल में जन्मा कोई भी रणभूमि छोड़कर गया हो, ऐसा कभी नहीं सुना गया — मुझे छोड़कर, और वह भी एक कायर-हृदय सारथि के दोष से।”

किं नु वक्ष्येऽभिसङ्गम्य पितरौ रामकेशवौ ।

युद्धात्सम्यगपक्रान्तः पृष्टस्तत्रात्मनः क्षमम् ॥ ३० ॥

kiṁ nu vakṣye 'bhisaṅgamyā pitarau rāma-keśavau yuddhāt samyag apakrāntaḥ prṣṭas tatrātmanah kṣamam

अर्थ: “अपने दोनों पिताओं — राम और केशव — से मिलने पर जब वे पूछेंगे, तब मैं क्या उचित उत्तर दूँगा — मैं, जो युद्ध से इतनी सफाई से हट आया हूँ?” (स्कन्ध 10, अध्याय 76, श्लोक 30)



द्युमान् की गदा से गिरे प्रद्युम्न को दारुक-पुत्र रण से बाहर ले जाता है; होश में आकर राजकुमार जब उसे फटकारते हैं, तब सारथि कोमलता से वह धर्म समझाता है जो सारथि और रथी को एक-दूसरे की रक्षा में बाँधता है।

उन्हें अपने ताऊ बलराम और पिता कृष्ण का स्मरण हुआ, और उनके प्रश्नों का सामना करने के लिए कोई शब्द न सूझा। इससे भी बुरा, उन्हें अपनी भाभियों का हँसना दिखाई दिया, जो खुलकर पूछेंगी — “हे वीर, बताओ तो, शत्रु से लड़ते समय तुम्हारा पुरुषत्व कैसे जाता रहा?”

सारथि का उत्तर

सारथि का उत्तर शान्त और दृढ़ है — “हे आयुष्मन्, हे स्वामी, मैंने यह अपने पद का धर्म जानकर किया है। युद्ध का नियम यही है कि संकट में पड़े रथी की रक्षा सारथि करे, और सारथि की रक्षा रथी करे।”

सारथिरुवाच

धर्मं विजानतायुष्मन् कृतमेतन्मया विभो ।

सूतः कृच्छ्रगतं रक्षेद् रथिनं सारथिं रथी ॥ ३२ ॥

sārathir uvāca dharmam vijānatāyusman kṛtam etan mayā vibho sūtaḥ kṛcchra-gatam rakṣed rathinam sārathim rathī

अर्थ: सारथि ने कहा — हे आयुष्मन्, हे विभो, मैंने धर्म को भली-भाँति समझकर ही ऐसा किया; विपत्ति में पड़े रथी को सूत बचाए और सूत को उसी प्रकार रथी बचाए। (स्कन्ध 10, अध्याय 76, श्लोक 32)

इसी नियम को जानते हुए, उसने समझाया, जब उसने देखा कि शत्रु की गदा से आहत होकर प्रद्युम्न मूर्च्छित और गम्भीर रूप से घायल हो गए हैं, तब वह उन्हें रण से दूर ले गया। अध्याय इसी संवाद पर समाप्त होता है।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. हर लीला प्रभु की है, तब भी जब वे अनुपस्थित प्रतीत हों। शुकदेवजी इस पूरे प्रसंग को कृष्ण का अद्भुत कर्म कहते हैं (श्लोक 1), यद्यपि कृष्ण दूर इन्द्रप्रस्थ में हैं और युद्ध का भार उनके पुत्र और बन्धुओं पर है। मनुष्य-देह में क्रीड़ा करने वाले प्रभु अपने जनों को परीक्षा में पड़ने देते हैं, ताकि उनकी दृढ़ता और उनका धर्म प्रकट हो; और परिणाम, जो आरम्भ में ही घोषित हो चुका है, कभी सन्देह में नहीं था। शाल्व का वरदान, लोहे का नगर, उसकी तपस्या — सब प्रभु की लीला के भीतर ही घटित होता है। भक्त प्रभु का हाथ केवल उद्धार में नहीं, स्वयं परीक्षा में भी देखना सीखता है।
2. समर्पण-रहित तपस्या केवल शक्ति देती है। शाल्व ने पूरे एक वर्ष एक मुट्ठी धूल पर उपवास किया, और शीघ्र प्रसन्न होने वाले शिव ने उसकी माँग पूरी कर दी। किन्तु क्योंकि उसकी प्रतिज्ञा (श्लोक 3) आहत अभिमान से जन्मी थी, उसका पुरस्कार विनाश का साधन बन गया। प्रभु के भक्तों को हानि पहुँचाने के लिए की गई तपस्या वर तो पा सकती है, आशीर्वाद कभी नहीं।
3. शूरवीर अपने मोर्चे पर खड़ा रहता है। वृष्णि वीरों ने भारी दबाव में भी अपने स्थान नहीं छोड़े (श्लोक 25)। फल प्रभु पर छोड़कर संकट में अपने नियत स्थान पर टिके रहना स्वयं भक्ति का एक रूप है।
4. मान को धर्म के आगे झुकना पड़ता है। अपने गुरुजनों के सामने प्रद्युम्न की लज्जा (श्लोक 30) सच्ची है, किन्तु सारथि उन्हें एक ऊँचा नियम दिखाता है (श्लोक 32) — सौंपे गए प्राणों की रक्षा का कर्तव्य। भक्ति कभी-कभी हमसे वह सहायता स्वीकार करवाती है जिसे हम ठुकराना चाहते।
5. विनम्र सेवक अधिक समझदार गुरु हो सकता है। अध्याय का अन्तिम धर्म-वचन कोई राजकुमार नहीं, एक सारथि कहता है। प्रभु अपना उपदेश अप्रत्याशित मुखों में रखते हैं, और भक्त उसे हर जगह सुनने को तत्पर रहता है।

एक भाक्तेमय चिन्तन

इस अध्याय से हमारे साथ जो रह जाता है वह उड़ता नगर या बाणों की वर्षा नहीं, अपितु एक राजकुमार और उसके सारथि का संवाद है। कृष्ण के घर में पले प्रद्युम्न स्वयं को अपने कुल के मान से नापते हैं और बचाए जाने पर लज्जित हैं। लगाम थामे दारुक-पुत्र स्वयं को अपने कर्तव्य से नापता है और तनिक भी लज्जित नहीं। दोनों अपने-अपने क्षेत्र में सही हैं, और भागवत हमें दोनों को बिना किसी का उपहास किए सुनने देता है। कितनी बार हमारी भक्ति में प्रद्युम्न के अभिमान की छाया रहती है — दृढ़ खड़े दिखने की, किसी की सहायता न चाहने की इच्छा। और कितनी बार प्रभु किसी विनम्र माध्यम से हमें संकट से बाहर ले जाते हैं, हमारे समझने से पहले ही। शाल्व के वर्ष भर के तप ने उसे लोहे का नगर दिलाया और शान्ति नहीं दी; सारथि के धर्म के शान्त ज्ञान ने एक जीवन बचाया। इन दोनों के बीच अध्याय धीरे से पूछता है कि हमारी अपनी शक्ति कहाँ रखी है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज जब किसी कठिनाई को अकेले ही सँभालने की ज़िद मन में उठे, तब रुककर सारथि के शब्दों को याद करें। उस परिस्थिति को प्रभु को अर्पित करें, दूसरों के द्वारा उनकी भेजी सहायता बिना खीझ के स्वीकार करें, और अपने कर्तव्यों पर वैसे ही स्थिर रहें जैसे वृष्णि वीर अपने मोर्चों पर रहे। फिर दिन का समापन धीरे-धीरे जपते हुए करें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध का यह छिहत्तरवाँ अध्याय शाल्व की कथा खोलता है — उसकी शपथ, उसका तप, लोहे का नगर सौभ, और कृष्ण की अनुपस्थिति में द्वारका का घेरा। प्रद्युम्न शत्रु की माया तोड़ते हैं और मित्र-शत्रु दोनों से सम्मान पाते हैं, फिर भी द्युमान् की गदा से गिरकर रण से बाहर ले जाए जाते हैं, और अपने मान के लिए तब तक व्यथित रहते हैं जब तक सारथि उन्हें वह धर्म नहीं बताता जो दोनों पर समान रूप से लागू है। यह सूत्र अगले अध्याय में आगे बढ़ेगा, जहाँ प्रभु स्वयं लौटते हैं। यह स्मरण रखते हुए कि उनकी अपनी नगरी का घेरा भी उनकी लीला थी, हम अपनी परीक्षाओं का सामना वृष्णि वीरों की स्थिरता से करें, और जब खड़े न रह सकें तब उठाए जाने की विनम्रता रखें।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, द्वितीय भाग), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), छिहत्तरवाँ अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-76-the-battle-between-shalva-and-the-vrishnis-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

